International Journal of Information Movement Vol.5 Issue I (May 2020)
Website: www.ijim.in ISSN: 2456-0553 (online) Pages 8-15

हठयोग प्रदीपिका एवं भक्तिसागर में वर्णित आहार की वैज्ञानिकता : हठयौगिक अभ्यास, स्वास्थ्य व चिकित्सा के सन्दर्भ में।

प्रदीप कुमार
शोधछात्र,
योग विज्ञान विभाग,
गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार,

डॉ0 उधम सिंह
एसिस्टेंट प्रोफेसर,
योग विज्ञान विभाग
गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार,

शोध आलेख सार:

आहार प्रत्येक जीवधारी की पहली आवश्यकता है। आहार के अभाव में मानव जीवन के अस्तित्व का बने रहना सम्भव ही नहीं है। इसलिए आहार को मानव जीवन के तीन उपस्तम्भों में सर्वोपरि माना गया है। क्योंकि अन्न ही प्राणियों का प्राण है। शरीर को पुष्ट कर बल, मेधा, सुख व तुष्टि प्रदान कर अर्थोपार्जन के लिए व्यापार आदि लौकिक कर्म तथा मोक्ष प्राप्ति के लिए ब्रह्मचर्या, यज्ञादि समस्त कर्म अन्न के द्वारा ही प्रतिष्ठित होते है। किंतु एक ओर जहाँ अन्न को शरीर के लिए प्राण तत्व माना गया है, वहीं दूसरी ओर अन्न को ही रोग का कारण भी कहा गया है। ''आहार सम्भवं वस्तु रोगश्चाहारिसम्भवाः''[1] अर्थात युक्ति पूर्वक आहार ग्रहण करने पर वह शरीर के लिए प्राण पालक बन जाता है। किंतु अयुक्तिपूर्वक आहार ग्रहण करने पर वह विष के समान प्रभाव डालकर शरीर में विभिन्न रोगों को उत्पन्न करता है। यदि आहार का सही नियमन किया जाए तो मनुष्य सदा निरोगी व स्वस्थ रह सकता है। और किसी कारण से रोग हो भी जाए तो उसे आहार के द्वारा ही ठीक किया जा सकता है। इसलिए हठयोग साधना पद्धति (हठयौगिक अभ्यास), विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों में भी उचित आहार व्यवस्था के बिना सफलता प्राप्त करना असम्भव माना गया है।

मुख्य शब्दः– आहार, हठयौगिक अभ्यास, स्वास्थ्य, चिकित्सा, वैज्ञानिकता।

आहार के महत्त्व को इसी बात से जाना जा सकता है कि जीवन के तीन उपस्तम्भों में आहार को सर्वोपरि माना गया है।[2] इन तीन उपस्तम्भों का शास्त्रीय निर्देशों के अनुसार युक्तिपूर्वक उपयोग करने पर शरीर खम्भों पर खड़े मकान की भांति स्थिर व स्वस्थ रहता है। किन्तु अयुक्तिपूर्वक आहार–विहार के सेवन से जीवन भर कान्ति व बल से शरीर का युक्त रहना असम्भव होता है। आहार केवल पंच भौतिक शरीर के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए ही आवश्यक नहीं है। इस धरा पर स्वस्थय जीवन जीते हुए इहलौकिक व योगभ्यास, यज्ञादि परलौकिक कर्मों की सफलता में आहार की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। इसलिए आयुर्वेद जैसी चिकित्सा पद्धतियों से लेकर मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रतिपादित समस्त योग पद्धतियों में भी आहार को मुख्य तत्व मानते हुए मित्राहार के रूप में वर्णित किया गया है। जिसका वैज्ञानिक प्रारूप हठयौगिक ग्रंथो व आयुर्वेद ग्रथों में प्राप्त होता है। क्योंकि युक्तिपूर्वक आहार–विहार ही योग साधना, चिकित्साकर्म, स्वास्थय संरक्षण में सफलता प्राप्त कराने वाला है। तथा अयुक्तिपूर्वक आहार को योग साधना में भी बाधक तत्व माना गया है।[3]

1.0 मित्ताहारः– सुस्निग्ध मधुर आहार भगवान को अपर्ण करने के पश्चात पूर्ण आहार का चौथा अंश छोड़कर ग्रहण करना ही मित्ताहार कहलाता है।[4]

मित्ताहार का वर्णन करते हुए चौथा अंश छोड़कर भोजन ग्रहण करने का निर्देश करते हुए भोजन की मात्रा का वर्णन किया गया है। तथा सुस्निग्ध व मधुर आहार से अभिप्राय अधिक चटपट्टा, खट्टा नमकीन व अधिक भारी भोजन ग्रहण न करने से है। अर्थात् भोजन की उचित मात्रा व सुपाच्य व हल्के भोजन को ही मानव शरीर के लिए उचित माना गया है। आहार उचित मात्रा में ग्रहण करने पर ही स्वास्थ को न बिगाड़ कर, ग्रहण करने वाले व्यक्ति के बल, तेज, कान्ति सुख व आयु को बढ़ाने वाला होता है।[5] इसलिए मात्रा का विचार करते हुए भोजन ग्रहण करने का निर्देश आयुर्वेद ग्रंथो में भी प्राप्त होता है। आहार की मात्रा प्रत्येक व्यक्ति की अग्नि पर निर्भर करती है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी आयु, बल व जठराग्नि के अनुसार अपनी भोजन की मात्रा स्वयं निश्चित कर सकता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपनी भूख के अनुसार चतुर्थाशं कम खाने का निर्देश मित्ताहार में किया गया है। भोज्य पदार्थ लघु हो या भारी पेट भर कर खाने का आदेश नहीं है। लघु पदार्थ भी अधिक मात्रा में ग्रहण करने पर गुरू (भारी) हो जाता है। लघु आहार आहार अधिक मात्रा में ग्रहण करने पर अग्नि सन्दीपन का गुण रखते हुए भी शरीर के लिए हानिकारक होता है। जिस प्रकार आँख तेजोमय होते हुए भी तेज की अधिकता से बिगड़ जाती है उसी प्रकार शरीर आहार से पोषित होते हुए आहार की अधिकता से विभिन्न रोग उत्पन्न होकर बिगड़ जाता है।[6] तथा कोमल, हल्का व चिकनाई युक्त भोजन मात्रा के अनुसार ग्रहण करने पर अग्नि सन्दीपन के गुण के कारण समुचित रूप से पच जाता है। जिससे वायु के स्थिर व सम अवस्था में रहने पर शरीर में किसी प्रकार का दुख(रोग) उत्पन्न नहीं होता।[7] अधिक मात्रा में भोजन ग्रहण करने पर सभी दोष कुपित हो जाते हैं तथा जठरागिन के मंद हो जाने पर अजीर्ण आदि रोग उत्पन्न हो जाते है। जो सभी रोगों का मूल कारण है।[8] प्रत्येक व्यक्ति में जठराग्नि की प्रबलता आयु, अवस्था व ऋतुओं के समय अलग–अलग रहती' है। इसलिए सभी के लिए एक समान आहार मात्रा निश्चित करना सम्भव नहीं है। तथा अधिक गरिष्ठ व चटपटा, अम्लीय भोजन शरीर के ओज (वीर्य) को नष्ट करता है। तथा रूक्ष व गुरू आहार वात रोगों को बढ़ाता है तथा शरीर में आलस्य उत्पन्न करता है। जो योग साधना के साथ–साथ स्वास्थ्य को भी बाधित करता है। अतः भोजन के अतियोग व विषमता से विभिन्न प्रकार के रोग उतन्न होते हैं जो शारीरिक आरोग्य व आयुष्य को कम करते हैं। इसलिए आहर (भोजन) का वैज्ञानिक स्वरूप यौगिक ग्रंथो में मित्ताहार के रूप में दिया गया है। जिसमें आहार की प्रकृति, मात्रा, गुणों का स्वरूप स्वास्थय प्राप्ति व साधना मार्ग में उन्नति के लिए साधक तत्व के रूप में कार्य करता है।

आहार की मात्रा व प्रकृति के पश्चात गुणों के आधार पर भोज्य पदार्थों का पथ्य व अपथ्य रूप में वर्णन किया गया है जिसका वर्णन निम्न प्रकार से किया गया है।

2.0 पथ्य भोज्य पदार्थः– गेहूँ, जौं, चावल (साठी चावल), जैसे सुपाच्य अन्न, दूध, घी, खाँड, मक्खन, मिसरी, मधु, सूंठ, परवल जैसे फल, पाँच प्रकार के शाक (जीवन्ती बथुआ, चौलाई, मेद्यनाद, पुनर्नवा) मूंग तथा वर्षा का जल योग साधकों के लिए पथ्य कारक कहे गए हैं।[10]

2.1 गेहूँः– टूटे हुए को मिलाने वाला, वातनाशक, शीतवीर्य, जीवनीय, शुक्रवर्धक, स्निग्ध, तथा स्थिरताकारक है।[11] गेहूँ मधुर, शीतल, वायु और पित को दूर करने वाली, बलदायक, मल का निष्कासन करने वाला वीर्यवर्धकता के साथ–साथ स्थिरता प्रदान करने वाले तत्वों से परिपूर्ण है।[12]

2.2 जौं :– जौं रूक्ष, शीत, गुरू, मधुररस, शरीर में स्थिरता उत्पन्न करने वाला, बलकारक, कफविकारों को नष्ट करने वाला है।[13] जौं मलों को उखाड़ने वाला, बुद्धि व अग्नि की वृद्धि करने वाला, कंठ रोग, चर्म रोग, कफ–पित्त–मेद, जुकाम, खाँसी, श्वास, रक्तविकार व तृषा को मिटाने वाला है।[14]

2.3 साठी चावलः– ग्रीष्म ऋतु में पकने वाली साठी चावल लघु मधुर, त्रिदोष नाशक, शरीर को दृढ़ करने वाले होते हैं।[15] सांठी चावल के उपयोग से सग्रहणी पेचिश रोग ठीक होते हैं। तथा शरीर को बल

प्रदान करते हैं। साठी चावल मदाग्नि वालों के लिए उत्तम कहे गए है क्योंकि यह पचने में हल्के होते हैं इसलिए इनके उपयोग से वायु विकार उत्पन्न नहीं होता।[16]

2.4- दूधः– मधुर शीतल, मृदु, स्निग्ध, बहल, पिच्छिल, गुरू, मन्द, प्रसन्न आदि दस गुणों वाला गाय का दूध होता है। ये ही दस गुण ओज के माने गए हैं। इसलिए गाय के दूध को ओज को बढ़ाने वाला तथा जीवनीय तत्वों में सबसे श्रेष्ठ माना गया है। जो रसायन की तरह हैं।[17]

"धातुवर्धक, बलवर्धक कौन है, कहिए नेक?

दूध समान त्रिलोक में अवर नं औषध एक।"

इस गुजराती कहावत के अनुसार रसायन जीवनीय दूध को पृथ्वी का अमृत कहा गया है। जो शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाकर शरीर को सदैव निरोगी रखता है। गाय का दूध रक्तपित, वात का शमन करता है।[18] दूध को पूर्ण–आहार माना जाता है।

2.5 घीः– गाय का घी, स्मरण शक्ति को बढ़ाने वाला, बुद्धि, शुक्र, ओज, मेद को बढ़ाने वाला तथा उन्माद, शोष, वात्त–पित, ज्वर का नाशक है। पुराना घी मद, उपस्मार, मूर्च्छा, कर्णरोग, उन्माद, विष, ज्वर, शिर शूल आदि में प्रशस्त माना जाता है।[19]

गाय का घी सबसे उत्तम माना गया है। इसमें विटामिन ए, डी, ई तथा के की मात्रा पाई जाती है। गाय का घी अग्निप्रदीप्क, नेत्र के लिए हितकारी, बुद्धि, लावण्य आयुष्य को बढ़ाकर रसायन वत्त प्रभाव वाला है।[20]

2.6खाँडः– शीतल, वीर्यवर्धक, स्नेहयुक्त, उरःक्षत रोगों में हितकर स्नेहयुक्त है। गुड़ से बनी शक्कर, खाण्ड आदि अतिसार नाशक, कफ को तोड़ने वाली, दाह रोग व पित्त में उपयोगी है।[21]

2.7 मधुः– वायुकारक, गुरू, शीतल, रक्तपित्त व कफ का नाशक, व्रणो को जोड़ने वाला कफ व मेद को उखाडने वाला कषाय व मधुर है।[22]

छत्ते में पूर्ण रूप से परिपक्व होने के पशचात निकलने वाला शहद् त्रिदोष को हरने वाला होता है।[23]

2.8 सूंठः– सोंठ स्निग्ध, अग्निदीपक, वीर्यवर्धक, गरम, वातनाशक, विपाक में मधुर, हृदय के लिए हितकारी व रूचि प्रिय होता है।[24] यह कफ व मलबंध को तोड़ने वाला वीर्य वर्धक है। तथा उल्टी, शूल, श्वासरोग, सूजन, अर्श, जुकाम, हृदयरोग तथा वायु को नष्ट करने वाली है। इसलिए सौंठ को 'विश्वभैषज' तथा महौषधि नाम दिये गए है।[25]

3.0 पाँच प्रकार के शाकः–

i) बथुआः त्रिदोष नाशक

ii) चौलाईः उन्माद नाशक, विषनाशक, रक्तपित्त में श्रेष्ठ व शीतल

iii) पुर्ननवाः कफ व पित्त नाशक

iv) जीवन्ती : वात–पित नाशक

यहाँ पाँच प्रकार के शाक को ही महत्त्वपूर्ण बताया गया है। ये बथुआ, जीवन्ती, पुर्ननवा आदि, पाँच प्रकार के शाक वात–पित कफ रूपी त्रिदोषों का शमन करने वाले है।[26] इसी प्रकार सभी शाक आँखो के

लिए अनुकूल नहीं है। पाँच प्रकार के शाक आँखो के लिए लाभदायक है जिनमें जीवन्ती बथुआ, चौलाई, पुनर्नवा व मेद्यनाद ही महत्त्वपूर्ण हैं।[27]

4.0 मूँगः– मूँग कषाय, मधुर रस, शीत, विपाक में कटु लघु व स्वच्छ है। जो श्लेष्मा व पित्त का शमन करने वाली है। मूँग सभी दालों व समस्त शमीधान्यों में सबसे सर्व श्रेष्ठ है।[28]

"मूँग बोला मैं हरादाना निशान मेरे सर,

दो–चार महीने खा लेने पर, खड़ा होता रोगी नर।"

मूँग द्विदल धान्य है। जो सभी दलहनों में अपने पाचक गुणों के कारण सबसे श्रेष्ठ माना जाता है। मूँग शरीर में बल तथा आरोग्य को बढ़ाता है।[29]

5.0 वर्षा का जलः– सम्पूर्ण जल एक प्रकार का होता है यह पानी बरसात के रूप में आकाश से गिरता है तथा ऋतु के अनुसार सूर्य, चन्द्रमा, वायु आदि से मिलकर तथा भूमि के ऊपर गिरकर उस ऋतु के अनुसार भूमि की उष्णता, शीतलता, स्निग्धता, रूक्षता आदि से सम्बन्ध होने पर उसी गुण वाला हो जाता है। आकाश से गिरता हुआ जल स्वभाव से स्वच्छ, शीतल, पवित्र, कल्याणकारी, हल्का व स्वादिष्ट गुणों वाला होता है।[30]

उपर्युक्त पथ्य तत्वों के गुणों के आधार पर कहा जा सकता है कि योग मनीषियों द्वारा ऐसे भोज्य पदार्थों का चुनाव किया गया है जो मधुर, स्निग्ध, शरीर को पुष्ठ करके वात्त पित्त–कफ रूपी त्रिदोषों का नाश करने वाले हैं। योगाभ्यासी को पुष्टिकारक सुमधुर, स्निग्ध गाय के दूध की बनी वस्तु, धातु को पुष्ठ करने वाला योग्य भोजन ही ग्रहण करना चाहिए।[31] साठी चावल, गेहूँ, जौं, सुपाच्य व शरीर को पुष्ठ करते हुए धातुओं का पोषण करते है तथा मलों को निष्कालित कर वात–पित्त–कफ त्रिदोषों को उत्पन्न होने से रोककर वीर्य, व बल को बढ़ाते हैं। सूंठ सभी आहारों में विश्वभैषज व महौषधि कहा गया है जो वात नाशक, मलबंध को तोड़कर अग्नि को बढ़ाता है, इसी प्रकार मूंग सभी दलहनो में सबसे उत्तम माना गया है। तथा गाय का घी, मक्खन, खाँड आदि धातुओं को पुष्ठ कर, ओज को बढ़ाकर, शरीर को विभिन्न पोषक तत्व प्रदान करते हैं। अतः सरलता से पाचन होने वाला, मधुर व स्निन्ध आहार जो त्रिदोषों को बढ़ाकर विभिन्न प्रकार के रोगों को उत्पन्न न करें। तथा व शरीर को बलशाली व धातुओं को पुष्ठ करके शरीर को स्वास्थ व आयुष्य प्रदान करने वाला भोजन ही पथ्य कारक है। जिसका वर्णन हठयोग प्रदीपिका में किया गया है।

6.0 अपथ्य भोज्य पदार्थः– कटु अम्ल, तिक्त, नमकीन, गरम, हरीशाक व खट्टीभाजी, तिल, तेल, सरसों, मदिरा (मद्य) मछली, बकरे आदि का मांस, दही, छाँछ, कुल थी। हींग तथा लहसुन आदि वस्तुएँ योग साधको के लिए अपथ्य कारक कही गई हैं।[32]

6.1 कटुः– कटु रस का कार्य मुख का शोधन, अग्नि बढ़ाना, मलनाश, खाये भोजन का रेचन, मार्गों की सफाई, कफ को शान्त करना हैं किंतु इस की अधिकता से पुरूषत्व का नाश, संज्ञानाश, अवसाद, मुर्च्छा, निर्बलता अन्धकार, चक्कर आना, शरीर में ताप व जलन, पाँव, हाथ, पसलियों व पीठ में वात विकार उत्पन्न होते हैं। इसलिए इस रस का अधिक प्रयोग वर्जित है।[33]

6.2 अम्लः– अम्ल रस कार्य अन्न में रूचि पैदा करना, अग्नि बढ़ाना, तेज बढ़ाना, बल को बढ़ाना, मुख में लार उत्पन्न करना, खाये हुए भोजन को बाहर निकालना, भोजन का पाचन करना है।

किंतु यह रस अधिक सेवन करने पर भोजन में अरूचि, पित्त को बढ़ाना, रक्त को दूषित करना, जलन पैदा करना, सुस्ती, व्रणों की पकाना, छाती, हृदय व कण्ठ में जलन उत्पन्न करता है।[34]

6.3 तिक्त या तीखवाः– तिक्त रस, मूर्च्छा, कोढ़, प्यास को शान्त करने वाला विषनाशक, कृमिनाशक, ज्वर नाशक, पाचक, अग्निदीपक, दूध का शोधन करने वाला है तथा अन्य दूसरे भोजन में रूचि पैदा करता है।

किंतु इस रस से युक्त भोजन की अधिक से रूक्ष, र्कश, विशाद स्वभाव होने से रस, रक्त, माँस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र का शोषण होता है। यह यह स्त्रोतसों में खरता उत्पन्न कर, हर्ष का क्षय, सज्ञां नाश, चक्कर आना, मुख में शुष्कता उत्पन्न करता है तथा अन्य वात रोगो को भी उत्पन्न करता है।[35]

6.4 लवण व नमकीन :– यह रस पाचन को नरम बनाने वाला अग्नि दीपक, वातनाशक, मूलमूत्र आदि अवरोधों का नाश करने वाला, आहार में रूचि उत्पन्न करने वाला है।

किंतु इस रस की अधिकता पित्त को कुपित करती है, संज्ञा नाश, शरीर को फाड़ना, माँस को गलाना, विष को बढ़ाना, पुरूषत्व का नाश, इन्द्रियों को जड़ बनाना, रक्तपित्त, अम्लपित्त, वातरक्त, विसर्प, इन्द्रलुप्त आदि रोगों को उत्पन्न करता है।[36]

6.5 हरीशाकः– सभी शाक आँखो के लिए उत्तम नहीं है।[37] तथा सरसों आदि हरी शाक त्रिदोष कारक तथा मल मूत्र का अवरोध करने वाली है[38] इसलिए अपथ्य कारक कही गई हैं।

कटु, तिक्त और कषाय रस रूक्षगुण होने से वात, मल, मूत्र और शुक्र को बाहर निकालने में कष्ट रूप होते हैं। अवरोध करते हैं। जिस द्रव्य का विपाक कटु होता है। वह वीर्य नाशक, मल–मूत्र का अवरोध करने वाला और वायुकारक होता है। जिस द्रव्य का विपाक अम्ल होता है। वह पित्तकारक, मल–मूत्र का रेचक और वीर्यनाशक होता इसलिए कटु, तिक्त व अम्लीय रसों को अपथ्य आहार कहा गया है।

6.6 तिल और तेलः– तिल का तेल वातनाशक औषधियों में सबसे श्रेष्ठ बलकारक, त्वचा के लिए हितकारी बुद्धि और अग्नि को बढ़ाने वाला, संयोग एवं संस्कार करने पर सब रोगों का नाश करने वाला है।[39]

तिल शब्द से ही तेल शब्द प्रचलित हुआ है। तेल शब्द तिल का ही घोतक है। किंतु भोजन के रूप में सेवन करने पर वह त्वचा, केश, चक्षु के लिए लाभकारी नहीं है। कफ और पितं का प्रकोप करने वाली ऋतुओं (बसंत, ग्रीष्म, शरद) में तिल का सेवन करने पर सर्दी, बुखार, चर्मविकार, रक्तविकार, गले के रोग, मधुमेह और कृर्मि सदृश कफ–पित्त से होने वाले रोग होते है।[40] इसलिए तिल का प्रयोग अपथ्य पदार्थों में किया गया है।

6.7 मद्य या मदिराः– स्वभाव से मद्य खट्टा व उष्ण है, विपाक में वह अम्लीय है।[41,] ओज ही शरीर का बल है, जिससे साहस की उत्पत्ति होती है। तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता बनी रहती है। शराब इस ओज बल को नष्ट करने वाला द्रव्य है।[42] इसलिए अम्लीय व ओज को नष्ट करने वाला होने के कारण तथा चेतना को नष्ट करने वाला होने के कारण मद्य को अपथ्य कहा जाता है।

6.8 मछली, बकरे आदि का मांस :– मछलियों का मांस–गुरू, उष्ण, वीर्य वर्धक होने के साथ–साथ बहुत से दोषों को उत्पन्न करने वाला है।[43] प्रोटीन, वसा के अतियोग, पचने में कठिन तामसिक प्रभाव वाला तथा अनेको परजीवी कृमि जैसे फीता (टेपवर्म), कोरोना आदि सक्रंमण को फैलाने वाला होता है।[44] इसलिए अपथ्य कहा गया है।

6.9 दहीः– दही रूचिकर अग्निदीपक, वीर्यवर्धक, स्नेहन योग्य व बलवर्धक है।

किंतु विपाक में अम्लीय तथा सही प्रकार से न जमने पर दही त्रिदोषकारक है।[45] शरद, ग्रीष्म और वसंत इन तीन ऋतुओं में दही खाना हितकर नहीं माना जाता। जो दही मंद होता है वह विष्ठा, वात–पित्त–कफ तथा दाह को उत्पन्न करने वाला होता है तथा स्वादु दही कफ व मेद की अधिकता करने वाला होता है[46] इसलिए अपथ्य कारक कहा गया है।

6.10 कुलथीः– कुलथी मधुर, मुत्रल, क्षुधावर्धक, वृक्काशमरी भेदक, कफध्न, चक्षुविकार नाशक, अर्शहर, प्लीहावृद्धि को दूर करने वाली तथा पित्त वृद्धि से उत्पन्न यकृत–विकृति में हितकारी होती है।

किंतु कुलथी पाक में तीखी, कसैली, पित्त तथा रक्त–विकार करने वाली, दाह करने वाली, उष्णवीर्य तथ पसीने को रोकने वाली है। तिक्त, कषाय विपाक होने के कारण कुलथी को अपथ्य कहा गया है।[47]

6.11 हिंग :– हिंग के औषधिय गुणों के अपार पर बहुत ही लाभकारी मानी जाती है। यह वायु तंत्र, उदर कृमि नाशक, पाचन क्रिया में सुधार तथा अन्य रोगों में अत्यंत लाभकारी है।

किंतु वात्त नाड़ियों को उत्तेजित करने का गुण होने के कारण कामोत्तेजक है। इसलिए योग साधना में अपथ्य आहार के अर्न्तगत रखी गई है।[48]

उपर्युक्त गुणों के आधार पर कहा जा सकता है कि आहार द्रव्यों के गुण व कर्म के आधार पर वात्त–पित्त–कफ रूपी त्रिदोषों तथा अम्ल, कटु, तिक्त, मधुर रसों के गुणों के आधार पर पथ्य व अपथ्य आहार में शामिल किया गया है अम्ल, कटु, तिक्त कषाय, मधुर व लवण रसों में मधुर रस को जन्म से ही शरीर के अनुकूल माना गया है। यह रस, रक्त मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, ओज व शुक्र आदि सप्त धातुओं को पुष्ठ करने वाला, बल कारक, कान्तिकारक, विष नाशक, वायुनाशक, आयुवर्धक अभिघात आदि से बेहोश पुरूष को भी जीवन देने वाला स्निग्ध व शीत है।49 इस प्रकार गुणों के आधार पर मधुर व स्निग्ध भोजन जो सुपाच्य, वात–पित्त–कफ त्रिदोषों को उत्पन्न न करने वाला है। उसे ही योग साधना में पथ्य भोजन के अन्तर्गत रखा गया है। और पथ्य व अपथ्य, मात्रा आदि आधारित मित्ताहार के पालन किए बिना योग साधना में सिद्धि प्राप्त करना असम्भव है। क्योंकि मित्ताहारी, त्यागी व ब्रह्मचारी साधक ही एक वर्ष या उससे कुछ अधिक समय में सिद्धि प्राप्त कर सकता है।[50] इसी प्रकार छान्दोग्य उपनिषद् में आहार शुद्धि द्वारा मोक्ष प्राप्ति के क्रम का वर्णन करते हुए कहा गया है कि आहार की शुद्धि से (अन्तः करण) सत्व शुद्धि होती है, सत्व शुद्धि से अटल स्मृति की प्राप्ति होती है। तथा स्मृति के अटल हो जाने पर समस्त ग्रथियों के खुल जाने पर अविधा का नाश होकर मोक्ष की प्राप्ति होती है।[51] महर्षि घेरण्ड द्वारा मित्ताहार के प्रभाव को ओर अधिक स्पष्ट करते हुए कहा है कि यदि कोई साधक योगारम्भ करते समय मित्ताहार के नियमों का पालन नहीं करता तो उसके शरीर में विभिन्न रोग उत्पन्न हो जाते हैं। तथा योग साधना में सिद्धि की प्राप्ति नहीं होती।[52] अधिक मात्रा में आहार ग्रहण करने पर शरीर में आलस्य व भारीपन उत्पन्न होता है जिससे हठयौगिक अभ्यासों की निरंतरता में बाधा उत्पन्न होती है। इसी प्रकार हठयौगिक अभ्यासों खासकर प्राणायाम के अभ्यास से शरीर में गर्मी उत्पन्न होती है। वह गरमी शरीर की चर्बी को जलाने लगती है। इसलिए प्राणायाम के साधक के लिए गाय के घी व दूध से बनी वस्तु तथा धातुओं को पुष्ठ करने वाला भोजन उत्तम कहा गया है। जिससे प्राणायाम करते समय होने वाले शारीरिक ह्रास की पूर्ति हो सके। इस प्रकार हठयौगिक अभ्यासों की सफलता में आहार (मित्ताहार) के नियमों का पालन अनिवार्य है।

दूसरी और स्वास्थ्य संरक्षण व चिकित्सा में आहार के महत्त्व को इस बात से समझा जा सकता है कि जहाँ आहार से शरीर में रोगों का होना सम्भव माना गया है; वहीं आहार को औषधि भी कहा गया है।[53] इसलिए रसायनवत प्रभाव के कारण सामान्य स्वास्थ्य से लेकर, समस्त चिकित्सा पद्धतियों में आहार योजना को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। प्रत्येक चिकित्सा पद्धतियों, ऐलोपैथी, होम्योपैथी, आयुर्वेद, एक्यूप्रेशर, योग चिकित्सा आदि समस्त चिकित्सा पद्धतियों में आहार नियमावली के सिद्धांतों का पालन अनिवार्य माना जाता है। इसी आधार पर पथ्य–अपथ्य आधारित आहार ग्रहण करने के सिद्धांत का प्रतिपादन योग चिकित्सा पद्धति में भी किया गया है।[54] क्योंकि यदि व्याधि को बढ़ाने वाले आहारीय तत्वों का निरंतर सेवन किया जाएगा तो शरीर पर चिकित्सीय तत्वों का प्रभाव न के बराबर ही होगा। जैसे अपच रोग की स्थिति में मैदायुक्त, गरिष्ठ, समौसे, पकौड़े, सरसों, अरबी, पीजा इत्यादि अपथ्य पदार्थों का सेवन करते रहने पर न तो अपच ठीक होगी; उसके साथ–साथ कब्ज व अम्लता रोग की वृद्धि की सम्भावना भी निरंतर बनी रहेगी। तथा चिकित्सीय तत्वों का प्रभाव भी शरीर पर अधिक नहीं होगा। इसी सिद्धांत पर आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति भी कार्य करती है। आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के अनुसार बिना समुचित आहार के न तो स्वस्थ व्यक्ति स्वस्थ रह सकता है तथा बिना उचित पथ्य–अपथ्य व्यवस्था के रोगी व्यक्ति में चिकित्सा कर्म भी सफल नहीं हो सकता। इसलिए आहार स्वस्थ व रोगी दोनों के लिए ही समान रूप से महत्त्वपूर्ण है।[55] इसलिए व्यक्ति को

चाहिए कि वह मात्रा, काल, पथ्य–अपथ्य विचार करते हुए संयमित चित्त से नित्यप्रति आहार ग्रहण करे। इस प्रकार खान–पान संबंधी सात्म्य ज्ञान वाले पुण्यवान पुरूष को बिना कारण के कभी भी रोग नहीं होता। हितकर आहार करने वाला व्यक्ति सौ वर्ष तक निरोगी व जितेन्द्रिय होकर वास करता है।[56] श्रीमद्भगवद्गीता[57] व घेरण्ड संहिता[58] आदि यौगिक ग्रंथो में भी अधिक चटपटा, तीखा, राजलिक व तामसिक भोजन विभिन्न रोगों को उत्पन्न कर दुख व शोक को उत्पन्न करने वाला बताया गया है। आहार के चिकित्सीय प्रभाव को समझने के लिए यह वाक्य सबसे उत्तम है कि दवा का सेवन किए बिना केवल पथ्य पालन से रोग दूर किया जा सकता है, लेकिन पथ्य पालन न किया जाए तो सैकड़ों दवाओं का सेवन करने पर भी रोग से छूटकारा नहीं मिल सकता।[59]

7.0निष्कर्षः–

निष्कषर्तः कहा जा सकता है कि हठयौगिक अभ्यासों, स्वास्थ्य व चिकित्सा कर्म की सफलता के लिए दिए गए मित्ताहार व पथ्य–अपथ्य निर्देश हमारे महर्षियों की वैज्ञानिक दृष्टि को दर्शाता है। शरीर व्याधि मन्दिरम् के अनुसार शरीर को व्याधियों का मन्दिर कहा गया है। और व्याधियों से ग्रस्त शरीर द्वारा इहलौकिक व परलौकिक किसी भी कार्य में सफलता की प्राप्ति नहीं की जा सकती। इसलिए शरीर का स्वस्थ रहना अति आवश्यक है। और 'आरोग्यं भोजनाधीनम्' के अनुसार शरीर का व्याधि मुक्त रहना भोजन के अधीन है। अर्थात् योग साधना, स्वास्थय व चिकित्सा कर्म में समुचित आहार–विहार के बिना उन्नति कर पाना असम्भव प्रतीत होता है। इसलिए हठयौगिक ग्रंथों व आयुर्वेद ग्रथों में आहार के महत्त्व को वैज्ञानिक तथ्यों व तर्कों के साथ वर्णित किया गया है।

8.0 सन्दर्भ सूचीः–

1. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 28/45।
2. प्रो0 रामहर्ष सिंह, स्वास्थ्यवृत्त विज्ञान, पृष्ठ–120।
3. हठ प्रदीपिका – 1/15।
4. हठ प्रदीपिका – 1/48।
5. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 5/6।
6. चरक संहिता, अध्याय–5, पृष्ठ 67।
7. ओमप्रकाश तिवारी, अष्टांगयोग (चरणदासकृत), पृष्ठ– 30।
8. प्रो0 रामहर्ष सिंह, स्वास्थ्यवृत्त विज्ञान, पृष्ठ–130।
9. ओम प्रकाश तिवारी, अष्टांग योग (संतचाणदास कृत), पृष्ठ–14।
10. हठ प्रदीपिका – 1/62।
11. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/21–22।
12. माधव चौधरी आहार ही औषधि है, पृष्ठ– 11।
13. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/19–20।
14. माधव चौधरी, आहार ही औषधि है, पृष्ठ–13।
15. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/6–12।
16. माधव चौधरी, आहार ही औषधि है, पृष्ठ–15।
17. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/216।
18. माधव चौधरी, आहार ही औषधि है, पृष्ठ–21।
19. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/230–233।
20. माधव चौधरी, आहार ही औषधि है, पृष्ठ– 33।
21. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/237–240।
22. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/243 – 45।
23. माधव चौधरी, आहार ही औषधि है, पृष्ठ–53।

24. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/294–95।
25. माधव चौधरी, आहार ही औषधि है, पृष्ठ–112।
26. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/89–112।
27. हठप्रदीपिका ज्योत्स्ना – 1/62।
28. चरक संहिता, सूत्र स्थान 27/23–24।
29. माधव चौधरी, आहार ही औषधि है, पृष्ठ–63।
30. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/194–200।
31. हठ प्रदीपिका – 1/63।
32. हठ प्रदीपिका – 1/59।
33. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 26/39/3
34. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 26/39/2
35. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 26/39/5
36. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 26/39/5
37. हठ प्रदीपिका, पृष्ठ– 31।
38. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/89–122।
39. चरक संहिता, सूत्रस्थान – 27/284–285।
40. माधव चौधरी, आहार ही औषधि है, पृष्ठ– 36–42।
41. चरक संहिता सूत्रस्थान – 27/176।
42. स्वास्थय वृत, आहार एवं यौगिक चिकित्सा, ईकाई–II पृष्ठ–22।
43. चरक संहिता – 27/88–90।
44. स्वास्थय वृत्त, आहार एवं यौगिक चिकित्सा, ईकाई–II पृष्ठ–20।
45. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/224–235।
46. माधव चौधरी, आहार ही औषधि है, पृष्ठ– 25।
47. माधव चौधरी, आहार ही औषधि है, पृष्ठ– 72।
48. माधव चौधरी, आहार ही औषधि है, पृष्ठ– 88।
49. चरक संहिता, सूत्र स्थान – 27/39/1
50. हठ प्रदीपिका – 1/57।
51. छान्दोग्य उपनिषद् – 7/26/2।
52. घेरण्ड संहिता – 5/16–17।
53. डॉ राजकुमारी गुप्ता, आहार चिकित्सा, पृष्ठ– 74।
54. डॉ राकेश गिरि स्वस्थवृत विज्ञान एवं यौगिक चिकित्सा, पृष्ठ– 134।
55. प्रो0 रामहर्ष सिंह, स्वस्थय वृत्त विज्ञान, पृष्ठ– 120।
56. चरक संहिता, सूत्रस्थान – 27/343–346।
57. श्री मद्भगवद्गीता – 17/9।
58. घेरण्ड संहिता – 5/21–22।
59. डॉ0 प्रकाश चन्द्र गंगराड़े, किस बिमारी में क्या खाएँ, क्या न खाएँ, पृष्ठ–1।